श्री राम जन्म कथा

गोस्वामी तुलसी दास कृत श्री रामचरितमानस पर आधारित

डॉ यतेंद्र शर्मा

श्री राम कथा संसथान पर्थ,
ऑस्ट्रेलिया - ६०२५
http://shriramkatha.org

श्री राम जन्म कथा

गोस्वामी तुलसी दास कृत श्री रामचरितमानस पर आधारित

डॉ यतेंद्र शर्मा

प्रकाशक

श्री राम कथा संसथान पर्थ, ऑस्ट्रेलिया, ६०२५
Website: https://shriramkatha.org
Email: srkperth@outlook.com
yatendra@optusnet.com.au

२०२१

सूची

श्री वंदना.....4
श्री राम कथा महात्मय.....6
भगवान् श्री राम जन्म हेतू.....10
श्री राम जन्म.....28
श्री राम आरती.....38
कथाकार.....39

श्री वंदना

ओं, ओं, ओं।

श्री गुरु वंदना

गुरुरब्रह्मा गुरुरविष्नू गुरुरदेवो महेश्वरः ।
गुरुः साक्षात परमब्रह्म, तस्मयी श्री गुरुवे नमः ।।

श्री गणेश वंदना

ओं श्री गणेशाय नमः।

ओं वक्रतुन्ड महाकाया, सूर्य कोटि समप्रभः ।
निर्विघ्नम कुरू मे देव, शुभ कार्येशू सर्वदा ।।

श्री हनुमंत वंदना

ओं श्री हनुमंतए नमः।

अतुलित बलधामं नमामि, स्वर्ण शैलाभ देहम नमामि ।
दनुज बल कृषाणुम नमामि, ग्यानिनामग्रगणयम नमामि ।।
सकल गुणनिधानं नमामि, वानराणामधीशम नमामि ।
रघुपति प्रिय भक्तं नमामि, वात जातम नमामि ।।

श्री राम वंदना

ओं श्री श्रीरामचन्द्रए नमः।

श्रीरामचन्द्र कृपालु भज मन हरणभवभयदारुणं ।
नवकञ्जलोचन कञ्जमुख करकञ्ज पदकञ्जारुणं ॥
कन्दर्प अगणित अमित छवि नवनील नीरदसुन्दरं।
पटपीतमानहु तडित रूचिशुचि नौमिजनकसुतावरं ॥
भजदीनबन्धु दिनेश दानवदैत्यवंशनिकन्दनं।
रघुनन्द आनन्दकन्द कोशलचन्द्र दशरथनन्दनं ॥
शिरमुकुटकुण्डल तिलकचारू उदारुअङ्गविभूषणं।
आजानुभुज शरचापधर सङ्ग्रामजितखरदूषणं ॥
इति वदति तुलसीदास शङ्करशेषमुनिमनरञ्जनं ।
ममहृदयकञ्जनिवासकुरु कामादिखलदलगञ्जनं ॥

अथ श्री राम जन्म कथा।

कथा है ये त्याग की, निःस्वार्थ की, परमार्थ की ।
प्रभु प्रेम की, संतोष की, जीवन लक्ष्य प्राप्ति की ।
दूर करे सब व्यथा। अथ श्री राम जन्म कथा ।

श्री राम कथा महात्मय

मेरी एक प्रसिद्द कविता की पंक्ति है,

'जीवन सम है विष अंगज, पी सम मीरा पा कृष्णज ।'

भक्त कहते हैं, अवश्य, यह विष तो अपने ही कृत्यों का परिणाम है, भुगतना ही पडेगा, पीना ही पडेगा, पर इस विष को अमृत कैसे बनाया जाय? भगवान् स्वामी श्री रामानंद जी महाराज कहते थे कि इसमें राम जोड़ दिया जाय तो विष, विश्राम (विष+राम=विश्राम) बन जाय, अर्थ, शांति। भगवान् श्री राम की पवित्र कथा ही विश्राम (शांति) का साधन है।

गोस्वामी तुलसी दास जी भी यही कहते हैं।

बुध बिश्राम सकल जन रंजनि, रामकथा कलि कलुष बिभंजनि ।
रामकथा कलि पंनग भरनी, पुनि बिबेक पावक कहुँ अरनी ।।
रामकथा कलि कामद गाई, सुजन सजीवनि मूरि सुहाई ।
सोइ बसुधातल सुधा तरंगिनि, भय भंजनि भ्रम भेक भुअंगिनि ।।

रामकथा पंडितों को विश्राम देने वाली, सब मनुष्यों को प्रसन्न करने वाली और कलियुग के पापों का नाश करने वाली है। रामकथा कलियुग रूपी साँप के लिए मोरनी है और विवेकरूपी अग्नि के प्रकट करने के लिए अरणि (मंथन की जाने वाली लकड़ी) है। रामकथा कलियुग में सब मनोरथों को पूर्ण करने वाली कामधेनु गौ है, और सज्जनों के लिए सुंदर संजीवनी जड़ी है। पृथ्वी पर यही अमृत की नदी है, जन्म-मरण रूपी भय का नाश करने वाली और भ्रम रूपी मेंढकों को खाने के लिए सर्पिणी है।

लोग मुझसे अक्सर यह प्रश्न पूछते हैं। हम तो प्रतिदिन श्री राम का नाम किसी न किसी प्रकार लेते ही हैं, फिर भी हमें शांति क्यों नहीं मिलती? श्रुति ने इस का सरल उत्तर दिया है, जिसे गोस्वामी तुलसी दास जी ने दोहराया है।

श्री राम कथा के कथन और श्रवण का शुभ फल किसे मिलता है, इस बारे में गोस्वामी जी कहते हैं जिन के हृदय में अपने माता, पिता एवं समस्त अग्रजों का सम्मान हो, वही राम कथा कथन और श्रवण के शुभ फल का उत्तराधिकारी है। बिना उनके आशीर्वाद के स्वप्न में भी राम प्राप्ति नहीं हो सकती, और बिना राम की प्राप्ति के यह विष, विश्राम नहीं बन सकता। स्वयं भगवान ने इसको चरित्र में ढाल के दिखाया है।

स्मरण कीजिए बालकांड। भगवान श्री राम अयोध्या के राजकुमार हैं। महामंत्री श्री सुमंत जी उन्हें महाराज श्री दशरथ का संदेश लेकर उनके महल में पहुँचते हैं। श्री सुमंत जी को देख भगवान उनके चरणों में नतमश्तक हो प्रणाम करते हैं। श्री सुमंत जी के नेत्रों में जल भर आ जाता है। 'हे प्रिय राजकुमार, मैं तो आपका एक छोटा सा सेवक हूँ। एक सेवक के चरण स्पर्श करना एक राज कुमार के लिए अकल्पनीय है', मृदु भाषा में बोले श्री सुमंत जी। भगवान कहते हैं, 'काका (भगवान श्री राम श्री सुमंत जी को काका कहकर संबोधित करते थे), अगर आप के स्थान पर सम्राट श्री दशरथ आए होते तो क्या मैं उनके चरण स्पर्श नहीं करता।' महामंत्री श्री सुमंत जी बोले, "वह तो आपके पिता हें, राजकुमार। उनके चरण स्पर्श करना तो आप का धर्म है।" राजकुमार श्री राम ने प्रत्युत्तर दिया, "आप भी तो पित्र समान हें काका"।

सुमंत जी उनको हृदय से लगा लेते हें। इस सम्मान का परिणाम - एक राजकुमार श्री राम, भगवान पुरुषोत्तम श्री राम बन हम सब के पूज्यनीय हुए।

अब दूसरी ओर एक और उदाहरण देखिए। मैं आपको सुंदरकांड में ले चलता हूँ। श्री हनुमान जी को नागपाश में बाँधकर मेघनाथ रावण की सभा में ले आता है। सभी राक्षस श्री हनुमान जी को प्राण दंड देने की रावण को सलाह देते हैं। यहाँ रावण के नाना मालयवंत जी इसके विरुद्ध सलाह देते हैं। दूत को मारना अनुचित है। रावण क्रोध मैं अपने ब्रद्ध नाना का अपमान करता है। उनका उपहास करता है। अपमानित हो मालयवंत जी सभा छोड़ अपने घर को प्रस्थान कर जाते हें। परिणाम - सोने की लंका का दहन और अंततः रावण के कुल का नाश। यह है बुज़ुर्गों के अपमान और उनकी अवमानना करके का परिणाम।

श्री गुरु देव एक कथा सुनाया करते थे। अब यह कथा सत्य है अथवा काल्पनिक, आप इस पर मत जाईए। इसका गूढ अर्थ समझने का प्रयास कीजिए।

एक संभ्रांत परिवार की कन्या को एक दूसरे गाँव के एक साधारण पुरुष से प्रेम हो गया। कन्या के पिता ने बहुत समझाया कि वह विवाह ना करे, परंतु कन्या नहीं मानी। तब पिता ने एक युक्ति सोची। ठीक है, विवाह अवश्य इसी लड़के के साथ होगा, परंतु मेरी दो शर्तें हैं। एक अभी कि बरात में कोई भी बुज़ुर्ग नहीं आएगा। दूसरी जब बारात आ जाएगी तो मैं बताऊँगा। संदेशा भेज दिया गया, लड़के के घर। बड़ी चर्चा हुई। सभी ब्रद्धों को बहुत बुरा लगा, लेकिन क्या करते? अपने बच्चे के आगे विवश थे, मान गये। लेकिन लड़के के नाना विफर गये। मैं तो अवश्य ही जाऊँगा। मैं अपना ऐसा श्रृंगार करूँगा कि कोई मुझे पहचान ही नहीं पाएगा। श्रृंगार किया। कोचवान बने। जब बारात पहुँच गयी तो एक पेड़ के नीचे छिप गये। सोचा जब फेरे होंगे, चुपके से देखूँगा। अब जब बारात पहुँच गयी तो बधू के पिता ने दूसरी शर्त रख दी। गाँव के पास एक नदी बहती थी। कहा इस नदी के निर्मल जल को शुद्ध दुग्ध से भर दो, तभी विवाह होगा। असंभव, यही सब युवा बारातियों ने कहा।

बेचारा लड़का, क्या करता! बारात वापस जाने लगी। तब नाना जो छिपे हुए थे, सामने आए और पूछा क्या हुआ? यह तुम बारात बिना दुल्हन के कैसे वापस ले जा रहे हो? उन्हें शर्त बतलाई गयी। तब नाना बोले,' बस इतनी सी बात। जाओ बधू के पिता से कह दो, हमने दुग्ध का प्रबंध कर लिया है, वह बस नदी के निर्मल जल को खाली करा दें।' संदेश सुनते ही बधू पिता ने कहा, 'अवश्य ही बारात में कोई वृद्ध है। यह कोई युवा सोच ही नहीं सकता। यह तो अनुभव का प्रतीक है।' बधू के पिता अब क्या करते? नदी के जल को खाली कराना तो संभव नहीं। विवाह हुआ। नाना जी प्रगट हुए। बधू के पिता ने उनसे क्षमा माँगी। देखा आपने बुज़ुर्ग की सलाह का प्रणाम। अपने बुज़ुर्गों का सम्मान करें, और सफलता आपके चरण चूमेगी।

बुज़ुर्गों का आशीर्वाद मिल जाय, श्री राम कथा श्रवण हो जाए और श्री राम कथा के द्वारा भगवान श्री राम को समर्पित हो जाएँ, तो फिर विष, विश्राम ही बन जाएगा। एक बार भगवान को समर्पित हो गये तो फिर अपनी ज़िम्मेदारी समाप्त। इस जीवन की नैया भगवान ही चलाएँ। जब भगवान हृदय में धारण हो जाते हैं तो संत पुरुष कहते हें कि इस दुनिया में रहते हुए हम कर्म अवश्य करते हें, परंतु वह केवल अपनी ज़िम्मेदारीयों को निभाने के लिए। भगवान श्री कृष्ण की श्रीमदभागवद् गीता में कही बात पूर्ण रूप से लागू होती है।

कर्मण्येवाधिकारस्त मा फलेषु कदाचन ।
मा कर्मफलहेतुर्भुर्मा ते संगोऽस्त्वकर्मणि ॥

कर्तव्य अर्थात कर्म करने में ही तेरा अधिकार है, फलों में कभी नहीं। अतः तू कर्म फल का हेतु भी मत बन, और तेरी अकर्मण्यता में भी आसक्ति न हो।

भगवान् श्री राम जन्म हेतू

हम भगवान् श्री राम के जन्म के कारणों का विवेचन करेंगे।

भगवान् श्री विष्णु के अवतार धारण करने का कारण कुछ और नहीं, परन्तु अपने भक्तों के विकारों को दूर करना, उनमें भक्ति का संचार करना, उनके कष्टों को निवारण करना, एवं उनके भगवद्-मिलन की अभिलाषा को पूर्ण करना है।

श्री गोस्वामी जी कहते हैं कि भगवान् के जन्म के कारण केवल और केवल अपने भक्तों को सांसारिक कष्टों एवं आध्यात्मिकता में बाधा से मुक्ति कराना ही है। अब ये सांसारिक कष्ट अथवा आध्यात्मिक बाधाएं उत्पन्न कैसे होती हैं, मुख्यतः चार विकारों के कारण - मद, काम, क्रोध, और लोभ। तो जब भी भगवद-भक्तों में मद, काम, क्रोध और लोभ की भावना उत्पन्न हो जाती है, तो भगवान् उसके हरण के लिए नर रूप धारण कर अपने भक्तों को इस से मुक्ति दिलाते हैं। इस के अतिरिक्त भगवद-प्रेम भी भगवान् के अवतार का कारण बनाता है। जब भी भगवद-भक्तों में भगवद-प्रेम इस पराकाष्ठा पर पहुँच जाता है कि वह उन्हें प्रत्यक्ष देखना चाहते हैं, तो भगवान् इस धरती पर अवतार धारण करते हैं।

जब जब पृथ्वी पर धर्म का नाश होने लगता है, अधर्मी बढ़ जाते हैं और वह हर प्रकार से संतों को सताते हैं, तो उनका निर्वाण करने के लिए भी भगवान् इस पृथ्वी पर जन्म लेते हैं।

जब जब होई,धरम कै हानि ।
बाढ़हि असुर ,अधम अभिमानी ।।
करहि अनीति,जाई नहीँ बरनी ।
सिदही विप्र, धेनु सुर धरनी ।।

तब तब प्रभु धरि,विविध शरीरा ।
हरहों कृपा निधि,सज्जन पीरा ।।

'जब जब धर्म का ह्रास होता है और नीच अभिमानी राक्षस बढ़ जाते हैं, और वे ऐसा अन्याय करते हैं कि जिसका वर्णन नहीँ हो सकता। ब्राह्मण, गौ, देवता और पृथ्वी कष्ट पाते हैं, तब तब कृपानिधान प्रभु, भाँति भाँति के (दिव्य) शरीर धारण कर सज्जनों की पीड़ा हरते हैं।'

ऐसा ही भगवान् श्री कृष्ण ने श्रीमदभागवदगीता में भी कहा है ।

यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत ।
अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम् ॥
परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम् ।
धर्मसंस्थापनार्थाय सम्भवामि युगे युगे ॥

'हे भारत, जब-जब धर्म की हानि और अधर्म की वृद्धि होती है, तब-तब ही मैं अपने रूप को रचता हूँ। अर्थात साकार रूप से लोगों के सम्मुख प्रकट होता हूँ। साधु पुरुषों का उद्धार करने के लिए, पाप कर्म करने वालों का विनाश करने के लिए और धर्म की अच्छी तरह से स्थापना करने के लिए मैं युग युग में प्रकट हुआ करता हूँ।'

उपर्युक्त संकल्पों की रक्षा हेतु प्रभु इस पृथ्वी पर अनेक बार जन्म लेते हैं। उनके जन्म लेने का कोई एक ही विशेष कारण नहीं होता वरन अनेकों कारण हो सकते हैं। श्री रामचरितमानस में भगवान् श्री राम के जन्म हेतु कुछ कारणों का विस्तार पूर्वक वर्णन किया गया है।

श्री गोस्वामी जी भगवद-जन्म के कारणों में सर्व प्रथम भगवद-भक्त अथवा उनके सेवकों में मद अथवा अहंकार को दूर करने का कारण प्रस्तुत करते हैं। जब भगवान् के प्रिय भक्त एवं सेवकों में

मद (अहंकार) का बीजारोपण हो जाता है, तो भगवान् इस के हरण के लिए अवतार धारण करते हैं।

भगवान् श्री विष्णु के दो अत्यंत प्रिय भक्त और सेवक हैं, जय और विजय। यह दोनों उनके सुरक्षा अधिकारी हैं। एक समय इन्हें अपने पद का अभिमान हो गया। सभी को अपने आगे तुच्छ समझने लगे। प्रभु का दरबार वैसे तो सभी संतों के लिए सदैव खुला रहता था, लेकिन ये अभिमानी उसी को प्रभु से मिलने देते जो इनकी विनती करता, इनके चरणों पर पड़ता।

नहिं कोउ अस जनमा जग माहीं। प्रभुता पाइ जाहि मद नाहीं॥

प्रभु को यह सहन नहीं था। चूँकि वह प्रभु का अत्यत सम्मान करते थे, और उन्हें शिकायत का कोई अवसर नहीं देते थे, अतः प्रभु को स्वयं इन्हें दण्डित करना असंभव हो गया था। उनके इस अभिमान का दंड देने के लिए प्रभु ने एक युक्ति सोची। उन्होंने अपनी साधना द्वारा श्री सनक कुमारों को आमंत्रित किया।

प्रभु का सन्देश जान यह श्री ब्रह्मा जी के मानस-पुत्र, श्री सनक, श्री सनन्दन, श्री सनातन एवं श्री सनतकुमार, भगवान श्री विष्णु के दर्शन हेतु बैकुण्ठधाम पहुँचे। जब वे बैकुण्ठधाम के द्वार पर पहुँचे, तो जय और विजय नामक द्वारपालों ने उन्हें रोककर कहा कि इस समय भगवान श्री विष्णु विश्राम कर रहे हैं, अतः आप लोग अंदर नहीं जा सकते।

यद्यपि वे चारों ऋषिगण अत्यधिक आयु के थे, किन्तु तप के प्रभाव से वे बालक नजर आते थे। इसी कारण से जय और विजय उन्हें पहचान नहीं पाये, और उन्हें साधारण बालक ही समझा।

श्री सनत कुमारों ने बहुत प्रकार से जय और विजय को समझाने का प्रयास किया। यह भी बतलाया कि वह प्रभु की आज्ञा से ही उनसे मिलने आए हैं। लेकिन ये दोनों अभिमानी सुरक्षा अधिकारी, जय और विजय, अपनी ही ज़िद्द पर अड़े रहे।

इतना समझाने के बाद भी जब जय और विजय ने उन्हें भगवान् श्री विष्णु से मिलने अंदर नहीं जाने दिया, तो ऋषिगणों ने क्रोधित होकर कहा, "अरे मूर्खों, हम भगवान श्री विष्णु के भक्त हैं और भगवान श्री विष्णु तो अपने भक्तों के लिए सदैव उपलब्ध रहते हैं। तुम दोनों अपनी कुबुद्धि के कारण हम लोगो को भगवान श्री विष्णु के दर्शन से विमुख रखना चाहते हो। ऐसे कुबुद्धि वाले विष्णुलोक में रहने के योग्य नहीं है। अतः हम तुम्हें शाप देते हैं कि तुम दोनों का देवत्व समाप्त हो जाये और तुम दोनों भूलोक में जाकर पापमय योनियों में जन्म लेकर अपने पाप का फल भोगो।"

द्वारपाल हरि के प्रिय दोऊ, जय और विजय जान सब कोऊ ।
बिप्र श्राप तें दूनों भाई, तामस असुर देह तिन्ह पायी ।

गोस्वामी जी लिखते हैं, 'श्री हरि के जय और विजय दो प्यारे द्वारपाल हैं, जिनको सब कोई जानते हैं। उन दोनों ने ब्राह्मण सनकादिक ऋषियों के श्राप वश तामसी शरीर पाया।'

सनकादिक ऋषियों के इस घोर श्राप को सुनकर जय और विजय भयभीत होकर उनसे क्षमा याचना करने लगे। इसी समय भगवान श्री विष्णु भी वहाँ पर आ गये। जय और विजय भगवान श्री विष्णु से प्रार्थना करने लगे कि वे ऋषियों से अपना श्राप वापस ले लेने का अनुरोध करें।

भगवान श्री विष्णु ने उन दोनों से कहा, "ऋषियों का श्राप कदापि व्यर्थ नहीं जा सकता। तुम दोनों को भूलोक में जाकर जन्म अवश्य

लेना पड़ेगा। अपने अहंकार का फल भोग लेने के बाद तुम दोनों पुनः मेरे पास वापस आओगे । तुम दोनों के पास यहाँ वापस आने के दो विकल्प है। पहला यह कि, यदि तुम दोनों भूलोक में मेरे भक्त बन कर रहोगे तो सात जन्मों के बाद यहाँ वापस आवोगे। और दूसरा यह कि यदि भूलोक में जाकर मुझसे शत्रुता रखोगे, तो तीन जन्मों के बाद तुम दोनों यहाँ वापस आओगे, क्योंकि उन तीनों जन्मों में मैं ही तुम्हारा संहार करूँगा।"

जय और विजय सात जन्मों तक पृथ्वीलोक में नहीं रहना चाहते थे, इसलिए उन्होंने दूसरे विकल्प को मान लिया।

यही जय और विजय भूलोक में सत युग में अपने पहले जन्म में हिरण्याक्ष और हिरण्यकश्यपु, त्रेता युग में दूसरे जन्म में रावण और कुम्भकर्ण, तथा द्वापर में तीसरे जन्म में शिशुपाल और दन्तवक्र बने।

हिरण्याक्ष को भगवान् ने वराह का शरीर धारण करके मारा। हिरण्यकश्यपु को श्री नरसिंह रूप धारण कर वध किया, और अपने भक्त श्री प्रहलाद का सुन्दर यश फैलाया।

जय और विजय भूलोक में त्रेता युग में अपने दूसरे जन्म में रावण और कुम्भकर्ण बने, और इनका वध करने के लिए भगवान् श्री विष्णु ने नर शरीर धारण कर श्री राम अवतार लिया।

यही जय विजय द्वापर युग में शिशुपाल एवं वक्रदन्त नाम से जन्मे, जिन्हें भगवान् श्री कृष्ण ने मुक्ति दी।

अब दूसरा उदाहरण भक्त के हृदय में काम और क्रोध जाग्रत होने पर उसके हरण हेतु अवतार का श्री गोस्वामी जी ने प्रस्तुत किया है। सभी जानते हैं कि ब्रह्मऋषि श्री नारद जी भगवान् को हृदय से

अत्यंत प्रिय हैं। जब उनके ह्रदय में काम की इक्षा उत्पन्न हुयी, और उसके पूर्ण न होने पर क्रोध उत्पन्न हुया, तो उनके अपराध को स्वयं पर धारण कर भगवान् ने नररूप धारण किया।

नारद श्राप दीन्ह एक बारा, कलप एक तेहि लगि अवतारा ।
गिरिजा चकित भईं सुनि बानी, नारद बिष्नु भगत पुनि ज्ञानी ।
कारण कवन श्राप मुनि दीन्हा, का अपराध रमापति कीन्हा ।
यह प्रसंग मोहि कहहु पुरारी, मुनि मन मोह आचरज भारी ।

भगवान् श्री शिव माँ पार्वती से कहते हैं, 'एक बार श्री नारद जी ने श्राप दिया, इस कारण भगवान् को नर रूप धारण करना पड़ा।' यह सुनकर माँ भवानी चकित हो गयीं और बोलीं, 'प्रभु श्री नारद जी तो श्री विष्णु भक्त और महा ज्ञानी हैं। मुनी ने भगवान् को श्राप किस कारण दिया? हे पुरारी, यह कथा मुझ से कहिये। मुनि श्री नारद के मन में मोह होना बड़े आश्चर्य की बात है।'

भगवान् श्री शिव शंकर बोले, 'देवर्षि श्री नारद को एक बार इस बात का घमंड हो गया कि कामदेव भी उनकी तपस्या और ब्रह्मचर्य को भंग नहीं कर सके। श्री नारद जी ने यह बात श्री शिव जी को बताई। देवर्षि के शब्दों में अहंकार भर चुका था। श्री शिव जी यह समझ चुके थे कि श्री नारद अभिमानी हो गए हैं। श्री भोलेनाथ ने श्री नारद से कहा कि भगवान श्री हरि के सामने अपना अभिमान इस प्रकार प्रदर्शित मत करना। इसके बाद श्री नारद भगवान श्री विष्णु के पास गए और श्री शिव जी के समझाने के बाद भी उन्होंने श्री हरि को पूरा प्रसंग सुना दिया। श्री नारद भगवान श्री विष्णु के सामने भी अपना घमंड प्रदर्शित कर रहे थे।

तब भगवान ने सोचा कि श्री नारद का घमंड तोड़ना होगा, यह शुभ लक्षण नहीं है। जब श्री नारद कहीं जा रहे थे, तब रास्ते में उन्हें एक बहुत ही सुंदर नगर दिखाई दिया, जहां किसी राजकुमारी के

स्वयंवर का आयोजन किया जा रहा था। श्री नारद भी वहां पहुंच गए और राजकुमारी को देखते ही मोहित हो गए। यह सब भगवान श्री हरि की माया ही थी।

राजकुमारी का रूप और सौंदर्य श्री नारद के तप को भंग कर चुका था। इस कारण उन्होंने राजकुमारी के स्वयंवर में हिस्सा लेने का मन बनाया। श्री नारद भगवान श्री विष्णु के पास गए और कहा कि आप अपना रूप मुझे दे दीजिए, जिससे कि वह राजकुमारी स्वयंवर में मुझे ही पति रूप में चुने। भगवान ने ऐसा ही किया। लेकिन जब श्री नारद मुनि स्वयंवर में गए तो उनका मुख वानर के समान हो गया। उस स्वयंवर में भगवान श्री शिव के दो गण भी थे। वे यह सभी बातें जानते थे। ब्राह्मण का वेष बनाकर यह सब देख रहे थे।

जब राजकुमारी स्वयंवर में आई तो बंदर के मुख वाले श्री नारद जी को देखकर बहुत क्रोधित हुई। उसी समय भगवान श्री विष्णु एक राजा के रूप में वहां आए। सुंदर रूप देखकर राजकुमारी ने उन्हें अपने पति के रूप में चुना लिया। यह देखकर शिवगण श्री नारद जी की हंसी उड़ाने लगे, और कहा कि पहले अपना मुख दर्पण में देखिए। जब श्री नारद जी ने अपने चेहरा वानर के समान देखा तो उन्हें बहुत क्रोध आया। श्री नारद मुनि ने उन शिवगणों को राक्षस योनी में जन्म लेने का श्राप दे दिया।

शिवगणों को श्राप देने के बाद श्री नारद जी भगवान श्री विष्णु के पास गए और क्रोधित होकर उन्हें बहुत भला-बुरा कहने लगे। माया से मोहित होकर श्री नारद मुनि ने श्री हरि को श्राप दिया कि जिस तरह आज मैं स्त्री के लिए व्याकुल हो रहा हूं, उसी प्रकार मनुष्य जन्म लेकर आपको भी स्त्री वियोग सहना पड़ेगा। उस समय वानर ही तुम्हारी सहायता करेंगे। भगवान श्री विष्णु ने कहा,

'ऐसा ही हो', और श्री नारद मुनि को माया से मुक्त कर दिया। तब श्री नारद मुनि को अपने कटु वचन और व्यवहार पर बहुत ग्लानि हुई, और उन्होंने भगवान श्री हरि से क्षमा मांगी।

भगवान श्री हरि ने कहा कि ये सब मेरी ही इच्छा से हुआ है, अत: तुम शोक न करो। उसी समय वहां भगवान श्री शिव के गण आए, जिन्हें श्री नारद मुनि ने श्राप दिया था। उन्होंने श्री नारद मुनि से क्षमा मांगी। तब श्री नारद मुनि ने कहा कि तुम दोनों राक्षस योनी में जन्म लेकर सारे विश्व को जीत लोगे, तब भगवान श्री विष्णु मनुष्य रूप में तुम्हारा वध करेंगे, और तुम्हारा कल्याण होगा।

अब श्री गोस्वामी जी ने तीसरा कारण अपने भक्त में लोभ उत्पन्न होने पर उसके विनाश परिणाम स्वरुप राक्षसता प्रदान होने पर उसके उद्धार हेतु नर अवतार धारण करना बताया है। महाराज प्रतापभानु भगवद-भक्त और सभी गुणों से संपन्न थे। भगवान् ने उन्हें ऐश्वर्यता, धन-धान्य एवं सर्व संपन्न राज्य का सम्राट बना रखा था। लेकिन उनके हृदय में अजन्मा, अजेता एवं सर्व-विजेता होने का लोभ जाग्रत हो गया, जो उनके विनास का कारण बना। उनके उद्धार के लिए भी भगवान् ने मनुज रूप धारण किया।

सुनु मुनि कथा पुनीत पुरानी। जो गिरिजा प्रति संभु बखानी॥
बिस्व बिदित एक कैकय देसू। सत्यकेतु तहँ बसइ नरेसू॥

महर्षि श्री याग्यवल्क्य जी महर्षि श्री भारद्वाज जी से कहते हैं, ' हे मुनि, वह पवित्र और प्राचीन कथा सुनो, जो श्री शिवजी ने माँ पार्वती से कही थी। संसार में प्रसिद्ध एक कैकय देश है। वहाँ सत्यकेतु नाम का राजा रहता (राज्य करता) था। उसके दो वीर पुत्र हुए, जो सब गुणों के भंडार और बड़े ही रणधीर थे। राज्य का उत्तराधिकारी जो बड़ा लड़का था, उसका नाम प्रतापभानु था। दूसरे पुत्र का नाम

अरिमर्दन था, जिसकी भुजाओं में अपार बल था और जो युद्ध में (पर्वत के समान) अटल रहता था। राजा का हित करने वाला और शुक्राचार्य के समान बुद्धिमान धर्मरुचि नामक उसका मंत्री था। इस प्रकार बुद्धिमान मंत्री और बलवान तथा वीर भाई के साथ ही स्वयं राजा भी बड़ा प्रतापी और रणधीर था। राजा अर्थ, धर्म और काम आदि के सुखों का समयानुसार सेवन करता था। राजा प्रतापभानु का बल पाकर भूमि सुंदर कामधेनु (मनचाही वस्तु देने वाली) हो गई। उनके राज्य में प्रजा सब प्रकार के दुःखों से रहित और सुखी थी, और सभी स्त्री-पुरुष सुंदर और धर्मात्मा थे। वेदों में राजाओं के जो धर्म बताए गए हैं, राजा सदा आदरपूर्वक और सुख मानकर उन सबका पालन करता था। प्रतिदिन अनेक प्रकार के दान देता और उत्तम शास्त्र, वेद और पुराण सुनता था। वह ज्ञानी राजा कर्म, मन और वाणी से जो कुछ भी धर्म करता था, सब भगवान श्री विष्णु को अर्पित करते रहता था। एक बार वह राजा एक अच्छे घोड़े पर सवार होकर, शिकार का सब सामान सजाकर विंध्याचल के घने जंगल में गया और वहाँ उसने बहुत से उत्तम-उत्तम हिरन मारे। राजा ने वन में फिरते हुए एक सूअर को देखा। उसने सूअर को ललकारा कि अब तेरा बचाव नहीं हो सकता। सूअर बहुत दूर ऐसे घने जंगल में चला गया जहाँ हाथी-घोड़े का निबाह (गमन) नहीं था। राजा बिलकुल अकेला था। वन में क्लेश भी बहुत था फिर भी राजा ने उस पशु का पीछा नहीं छोड़ा। राजा को बड़ा धैर्यवान देखकर, सूअर भागकर पहाड़ की एक गहरी गुफा में जा घुसा। उस में जाना कठिन देखकर राजा को बहुत पछताकर लौटना पड़ा। पर उस घोर वन में वह रास्ता भूल गया। बहुत परिश्रम करने से थका हुआ और घोड़े समेत भूख-प्यास से व्याकुल राजा नदी-तालाब खोजता, खोजता पानी बिना बेहाल हो गया। वन में फिरते, फिरते उसने एक आश्रम देखा, वहाँ कपट से मुनि का वेष बनाए एक राजा रहता था जिसका देश राजा प्रतापभानु ने छीन लिया था, और जो सेना को छोड़कर युद्ध से भाग गया था। प्रतापभानु का समय (अच्छे दिन) जानकर और अपना

कुसमय (बुरे दिन) अनुमान कर उसके मन में बड़ी ग्लानि हुई। इससे वह न तो घर गया और न अभिमानी होने के कारण राजा प्रतापभानु से ही मिला (मेल किया)। दरिद्र की भाँति मन ही में क्रोध को मारकर वह राजा तपस्वी के वेष में वन में रहता था। राजा प्रतापभानु उसी के पास गया। उसने तुरंत पहचान लिया कि यह प्रतापभानु है। राजा प्यास के कारण व्याकुलता में उसे पहचान न सका। सुंदर वेष देखकर राजा ने उसे महामुनि समझा और घोड़े से उतरकर उसे प्रणाम किया। परन्तु बड़ा चतुर होने के कारण राजा ने उसे अपना नाम नहीं बताया।

नदी के पवित्र जल में स्नान कर राजा की सारी थकावट मिट गई। राजा सुखी हो गया। तब तपस्वी उसे अपने आश्रम में ले गया और सूर्यास्त का समय जानकर उसने राजा को बैठने के लिए आसन दिया। फिर वह तपस्वी कोमल वाणी से बोला, 'तुम कौन हो? सुंदर युवक होकर जीवन की परवाह न करके वन में अकेले क्यों फिर रहे हो? तुम्हारे चक्रवर्ती राजा के से लक्षण देखकर मुझे बड़ी दया आती है।'

राजा ने कहा, 'हे मुनीश्वर! प्रतापभानु नाम का एक राजा है। मैं उसका मंत्री हूँ। शिकार के लिए फिरते हुए राह भूल गया हूँ। बड़े भाग्य से यहाँ आकर मैंने आपके चरणों के दर्शन पाए। हमें आपका दर्शन दुर्लभ था। जान पड़ता है कुछ भला होने वाला है।'

मुनि ने कहा, 'हे तात, अँधेरा हो गया। तुम्हारा नगर यहाँ से सत्तर योजन पर है। हे सुजान, घोर अँधेरी रात है, घना जंगल है, रास्ता सरल नहीं है, ऐसा समझकर तुम आज यहीं ठहर जाओ। सबेरा होते ही चले जाना।

'हे नाथ, बहुत अच्छा', ऐसा कहकर और उसकी आज्ञा सिर चढ़ाकर घोड़े को वृक्ष से बाँधकर राजा बैठ गया। राजा ने उसकी

बहुत प्रकार से प्रशंसा की और उसके चरणों की वंदना करके अपने भाग्य की सराहना की। फिर सुंदर कोमल वाणी से कहा, 'हे प्रभो, आपको पिता जानकर मैं ढिठाई करता हूँ। हे मुनीश्वर, मुझे अपना पुत्र और सेवक जानकर अपना नाम, धाम विस्तार से बतलाइए।'

राजा ने उसको नहीं पहचाना, पर वह राजा को पहचान गया था। राजा तो शुद्ध हृदय था, और वह कपट करने में चतुर था। एक तो वैरी, फिर जाति का क्षत्रिय, फिर राजा। वह छल-बल से अपना काम बनाना चाहता था। वह शत्रु अपने राज्य सुख को स्मरण करके दुःखी था। उसकी छाती कुम्हार के आँवे की आग की तरह भीतर ही भीतर सुलग रही थी। राजा के सरल वचन कान से सुनकर, अपने वैर को यादकर वह हृदय में हर्षित हुआ। वह कपट में डुबोकर बड़ी युक्ति के साथ कोमल वाणी बोला, 'अब हमारा नाम भिखारी है, क्योंकि हम निर्धन और अनिकेत (घर-द्वारहीन) हैं।' राजा ने कहा , 'आप जो हों सो हों, मैं आपके चरणों में नमस्कार करता हूँ। हे स्वामी, अब मुझ पर कृपा कीजिए।'

कपटी मुनि ने कहा, 'हे भाई, हमारा नाम एकतनु है।'

यह सुनकर राजा ने फिर सिर नवाकर कहा, 'मुझे अपना अत्यन्त अनुरागी सेवक जानकर अपने नाम का अर्थ समझाकर कहिए।'

कपटी मुनि ने कहा, 'जब पहले सृष्टि उत्पन्न हुई थी, तभी मेरी उत्पत्ति हुई थी। तबसे मैंने फिर दूसरी देह नहीं धारण की। इसी से मेरा नाम एकतनु है।'

राजा यह सुनकर उस तपस्वी के वश में हो गया, और तब वह उसे अपना नाम बताने लगा।

तपस्वी ने कहा, ' राजन ! मैं तुमको जानता हूँ। तुमने कपट किया, वह मुझे अच्छा लगा। हे राजन्, ऐसी नीति है कि राजा लोग जहाँ-तहाँ अपना नाम नहीं कहते। तुम्हारी वही चतुराई समझकर तुम पर मेरा बड़ा प्रेम हो गया है। तुम्हारा नाम प्रतापभानु है, महाराज सत्यकेतु तुम्हारे पिता थे। हे राजन्!,गुरु की कृपा से मैं सब जानता हूँ, पर अपनी हानि समझकर कहता नहीं।'

राजा बोले, 'हे दयासागर मुनि, आपके दर्शन से ही चारों पदार्थ (अर्थ, धर्म, काम और मोक्ष) मेरी मुट्ठी में आ गए। स्वामी को प्रसन्न देखकर मैं एक दुर्लभ वर माँगकर क्यों न शोकरहित हो जाऊँ? मेरा शरीर वृद्धावस्था, मृत्यु और दुःख से रहित हो जाए। मुझे युद्ध में कोई जीत न सके, और पृथ्वी पर मेरा सौ कल्प तक एक छत्र अकण्टक राज्य हो।'

तपस्वी ने कहा, 'हे राजन्, ऐसा ही हो। पर एक बात कठिन है, उसे भी सुन लो। हे पृथ्वी के स्वामी, केवल ब्राह्मण कुल को छोड़ काल भी तुम्हारे चरणों पर सिर नवाएगा। हे नरपति, यदि तुम ब्राह्मणों को वश में कर लो, तो श्री ब्रह्मा, श्री विष्णु और श्री महेश भी तुम्हारे अधीन हो जाएँगे।'

राजा उसके वचन सुनकर बड़ा प्रसन्न हुआ और कहने लगा, 'हे स्वामी, मेरा नाश अब नहीं होगा। हे कृपानिधान प्रभु, आपकी कृपा से मेरा सब समय कल्याण होगा।'

'एवमस्तु' (ऐसा ही हो)', कहकर वह कुटिल कपटी मुनि फिर बोला, 'तुम मेरे मिलने तथा अपने राह भूल जाने की बात किसी से कहना नहीं। यदि कह दोगे, तो हमारा दोष नहीं। हे प्रतापभानु, इस बात के प्रकट करने से अथवा ब्राह्मणों के शाप से ही तुम्हारा नाश संभव होगा।और किसी उपाय से, चाहे श्री ब्रह्मा और श्री शंकर भी मन में क्रोध करें, तुम्हारी मृत्यु नहीं होगी।'

राजा ने मुनि के चरण पकड़कर कहा, 'हे स्वामी, सत्य ही है। ब्राह्मण और गुरु के क्रोध से कहिए कौन रक्षा कर सकता है? यदि श्री ब्रह्मा भी क्रोध करें, तो गुरु बचा लेते हैं। पर गुरु से विरोध करने पर जगत में कोई भी बचाने वाला नहीं है। मैं आपके कथन के अनुसार ही चलूँगा, भले ही मेरा नाश हो जाए, मुझे इसकी चिन्ता नहीं है। मेरा मन तो हे प्रभो, केवल एक ही डर से डर रहा है कि ब्राह्मणों का शाप बड़ा भयानक होता है। वे ब्राह्मण किस प्रकार से वश में हो सकते हैं, कृपा करके वह भी बताइए। हे दीनदयालु, आपको छोड़कर और किसी को मैं अपना हितू नहीं देखता।'

तपस्वी ने कहा, 'हे राजन्, संसार में उपाय तो बहुत हैं, पर वे कष्ट-साध्य हैं। बड़ी कठिनता से बनने में आते हैं। इस पर भी सिद्ध हों या न हों, उनकी सफलता निश्चित नहीं है। हाँ, एक उपाय बहुत सहज है, परन्तु उसमें भी एक कठिनता है। हे राजन्, वह युक्ति तो मेरे हाथ है, पर मेरा जाना तुम्हारे नगर में हो नहीं सकता। जब से पैदा हुआ हूँ तब से आज तक मैं किसी के घर अथवा गाँव नहीं गया। परन्तु यदि नहीं जाता हूँ, तो तुम्हारा काम बिगड़ता है।'

राजा ने मुनि के चरण पकड़ लिए और कहा, 'ऐसी नीति कही है कि बड़े लोग छोटों पर स्नेह करते ही हैं। हे स्वामी, कृपा कीजिए। आप संत हैं। दीनदयालु हैं। हे प्रभो, मेरे लिए इतना कष्ट अवश्य सहिए।'

राजा को अपने अधीन जानकर, कपट में प्रवीण तपस्वी बोला, 'हे राजन्, सुनो, मैं तुमसे सत्य कहता हूँ। जगत में मुझे कुछ भी दुर्लभ नहीं है। तुम्हारा काम अवश्य करूँगा क्योंकि तुम, मन, वाणी और शरीर, तीनों, से मेरे भक्त हो। नरपति, मैं यदि रसोई बनाऊँ और तुम उसे परोसो और मुझे कोई जानने न पावे, तो उस अन्न को जो भी खाएगा, सो तुम्हारा आज्ञाकारी बन जाएगा। यही नहीं, उन भोजन करने वालों के घर भी जो कोई भोजन करेगा, हे राजन्, वह

भी तुम्हारे अधीन हो जाएगा। हे राजन्, जाकर यही उपाय करो और वर्षभर नित्य भोजन कराने का संकल्प कर लेना। नित्य नए एक लाख ब्राह्मणों को कुटुम्ब सहित निमंत्रित करना। मैं तुम्हारे सकंल्प के काल अर्थात एक वर्ष तक प्रतिदिन भोजन बना दिया करूँगा। हे राजन्, इस प्रकार बहुत ही थोड़े परिश्रम से सब ब्राह्मण तुम्हारे वश में हो जाएँगे। ब्राह्मण हवन, यज्ञ और सेवा-पूजा करेंगे, तो उस प्रसंग (संबंध) से देवता भी सहज ही वश में हो जाएँगे।'

मैं एक और पहचान तुमको बताए देता हूँ कि मैं इस रूप में कभी न आऊँगा। हे राजन्, मैं अपनी माया से तुम्हारे पुरोहित को हर लाऊँगा। तप के बल से उसे अपने समान बनाकर एक वर्ष यहाँ रखूँगा और मैं उसका रूप बनाकर सब प्रकार से तुम्हारा काम सिद्ध करूँगा। हे राजन्, रात बहुत बीत गई, अब सो जाओ। आज से तीसरे दिन मुझसे तुम्हारी भेंट होगी। तप के बल से मैं घोड़े सहित तुमको सोते ही में घर पहुँचा दूँगा। मैं वही पुरोहित का वेश धरकर आऊँगा। जब एकांत में तुमको बुलाकर सब कथा सुनाऊँगा, तब तुम मुझे पहचान लेना। राजा ने आज्ञा मानकर शयन किया और वह कपट-ज्ञानी आसन पर जा बैठा। राजा थका था, उसे खूब गहरी नींद आ गई। पर वह कपटी कैसे सोता? उसे तो बहुत चिन्ता हो रही थी। उसी समय वहाँ कालकेतु राक्षस आया जिसने सूअर बनकर राजा को भटकाया था। वह तपस्वी राजा का बड़ा मित्र था और खूब छल-प्रपंच जानता था। उसके सौ पुत्र और दस भाई थे जो बड़े ही दुष्ट, किसी से न जीते जाने वाले और देवताओं को दुःख देने वाले थे। ब्राह्मणों, संतों और देवताओं को दुःखी देखकर राजा ने उन सबको पहले ही युद्ध में मार डाला था। उस दुष्ट ने पिछला बैर याद करके तपस्वी राजा से मिलकर सलाह विचारी और षड्यंत्र किया। जिस प्रकार शत्रु का नाश हो, वही उपाय रचा। भावीवश राजा प्रतापभानु कुछ भी न समझ सका। उसने प्रतापभानु राजा को घोड़े सहित क्षणभर में घर पहुँचा दिया। राजा को रानी के पास सुलाकर घोड़े को अच्छी तरह से घुड़साल

में बाँध दिया। फिर वह राजा के पुरोहित को उठा ले गया और माया से उसकी बुद्धि को भ्रम में डालकर उसे उसने पहाड़ की खोह में ला रखा।

राजा सबेरा होने से पहले ही जागा और अपना घर देखकर उसने बड़ा ही आश्चर्य माना। मन में मुनि की महिमा का अनुमान करके वह धीरे से उठा, जिसमें रानी न जान पावे। फिर उसी घोड़े पर चढ़कर वन को चला गया। नगर के किसी भी स्त्री, पुरुष ने नहीं जाना। दो पहर बीत जाने पर राजा आया। घर-घर उत्सव होने लगे और बधावा बजने लगा। जब राजा ने पुरोहित को देखा, तब वह अपने उसी कार्य का स्मरणकर उसे आश्चर्य से देखने लगा। राजा को तीन दिन युग के समान बीते। उसकी बुद्धि कपटी मुनि के चरणों में लगी रही। निश्चित समय जानकर पुरोहित बना हुआ राक्षस आया और राजा के साथ की हुई गुप्त सलाह के अनुसार उसने अपने सब विचार उसे समझाकर कह दिए। संकेत के अनुसार गुरु को उस रूप में पहचानकर राजा प्रसन्न हुआ। उसने तुरंत एक लाख उत्तम ब्राह्मणों को कुटुम्ब सहित निमंत्रण दे दिया। पुरोहित ने छह रस और चार प्रकार के भोजन, जैसा कि वेदों में वर्णन है, बनाए। उसने मायामयी रसोई तैयार की और इतने व्यंजन बनाए जिन्हें कोई गिन नहीं सकता। अनेक प्रकार के पशुओं का मांस पकाया और उसमें उस दुष्ट ने ब्राह्मणों का मांस मिला दिया। सब ब्राह्मणों को भोजन के लिए बुलाया और चरण धोकर आदर सहित बैठाया। ज्यों ही राजा परोसने लगा, उसी काल आकाशवाणी हुई, 'हे ब्राह्मणों, उठकर अपने घर जाओ। यह अन्न मत खाओ। इस के खाने में बड़ी हानि है। रसोई में ब्राह्मणों का मांस बना है।'

आकाशवाणी का विश्वास मानकर सब ब्राह्मण उठ खड़े हुए। राजा व्याकुल हो गया, परन्तु उसकी बुद्धि मोह में भूली हुई थी। होनहारवश उसके मुँह से एक बात भी न निकली। तब ब्राह्मण

क्रोध सहित बोल उठे। उन्होंने कुछ भी विचार नहीं किया, 'अरे मूर्ख राजा, तू जाकर परिवार सहित राक्षस हो। रे नीच क्षत्रिय, तूने तो परिवार सहित ब्राह्मणों को बुलाकर उन्हें नष्ट करना चाहा था, ईश्वर ने हमारे धर्म की रक्षा की। अब तू परिवार सहित नष्ट होगा। एक वर्ष के भीतर तेरा नाश हो जाए। तेरे कुल में कोई पानी देने वाला तक न रहेगा।'

शाप सुनकर राजा भय के मारे अत्यन्त व्याकुल हो गया। फिर सुंदर आकाशवाणी हुई।

बिप्रहु श्राप बिचारि न दीन्हा, नहिं अपराध भूप कछु कीन्हा ।
चकित बिप्र सब सुनि नभबानी, भूप गयउ जहँ भोजन खानी ।

'हे ब्राह्मणों, तुमने विचार कर शाप नहीं दिया। राजा ने कुछ भी अपराध नहीं किया।'

आकाशवाणी सुनकर सब ब्राह्मण चकित हो गए।

पुरोहित को उसके घर पहुँचाकर असुर कालकेतु ने कपटी तपस्वी को खबर दी। उस दुष्ट ने जहाँ तहाँ पत्र भेजे जिससे सब बैरी राजा सेना सजाकर चढ़ दौड़े। उन्होंने डंका बजाकर नगर को घेर लिया। नित्य प्रति अनेक प्रकार से लड़ाई होने लगी। प्रतापभानु के सब योद्धा शूरवीरों की करनी करके रण में जूझ मरे। राजा भी भाई सहित खेत रहा।

सत्यकेतु कुल कोउ नहिं बाँचा, बिप्रश्राप किमि होइ असाँचा ।
रिपु जिति सब नृप नगर बसाई, निज पुर गवने जय जसु पाई ।

सत्यकेतु के कुल में कोई नहीं बचा। ब्राह्मणों का श्राप झूठा कैसे हो सकता था? शत्रु को जीतकर नगर को फिर से बसाकर सब राजा विजय और यश पाकर अपने अपने नगर को चले गए।

यह प्रतापी राजा अगले जन्म में राक्षस सम्राट बना, और भगवान् ने इसके कल्याण हेतु नर रूप धारण किया।

हे भवानी एक और कारण सुनो जिस लिए श्री विष्णु भगवान् ने नर का रूप धारण किया। ये हे प्रेम वश।

स्वायंभू मनु और सतरूपा, जिन्ह तें भई नरसृष्टि अनूपा ।
दंपति धर्म आचरण नीका, अजहुँ गाव श्रुति जिन्ह कै लीका ।

श्री मनु और उनकी पत्नी शतरूपा से ही मनुष्य जाति की उत्पत्ति हुई। इन दोनों पति-पत्नी के धर्म और आचरण बहुत ही पवित्र थे। वृद्ध होने पर श्री मनु अपने पुत्र को राज देकर वन में चले गए। वहां जाकर श्री मनु और शतरूपा ने कई हजार साल तक भगवान श्री विष्णु को प्रसन्न करने के लिए तपस्या की। तपस्या से प्रसन्न हो, भगवान श्री विष्णु आकाशवाणी द्वारा बोले, 'हे पुत्र वर मांग'।

जो भुसुंडि मन मानस हंसा, सगुन अगुन जेहि निगम प्रसंसा।
देखहिं हम सो रूप भरी लोचन, कृपा करहु प्रनतारति मोचन।

आकाशवाणी सुन श्री मनु एवं सतरूपा जी बोले, 'हे प्रभु, जो काकभुशुंडि के मनरूपी मानसरोवर में विहार करने वाले हंस है, सगुण और निर्गुण कहकर वेद जिनकी प्रशंसा करते हैं, हे शरणागत के दुःख मिटानेवाले प्रभो, ऐसी कृपा कीजिए कि हम उसी रूप को नेत्र भरकर देखें।'

श्री मनु और सतरूपा के प्रेम एवं भक्तिमय वचन सुन तब प्रभु उनके समक्ष प्रगट हुए और वर मांगने के लिए कहा।

दानी सिरोमनि कृपानिधि, नाथ कहूँ सतिभाउ।
चाहूं तुमहिं समान सुत, प्र भु सो कवन दुराऊ।

तब श्री मनु जी बोले, 'हे दानियों के शिरोमणि, हे कृपानिधान, हे नाथ, मैं अपने मन का सच्चा भाव कहता हूँ कि मैं आपके समान पुत्र चाहता हूँ। प्रभु से भला क्या छिपाना।'

देखि प्रीति सुनि बचन अमोले, एवमस्तु करूणानिधि बोले।
आपु सरिस खोजों कहँ जाई, नृप तव तनय होब मैं आयी।

उनकी इच्छा सुनकर श्री हरि ने कहा, 'कि संसार में मेरे समान कोई और नहीं है। इसलिए तुम्हारी अभिलाषा पूरी करने के लिए मैं स्वयं तुम्हारे पुत्र के रूप में जन्म लूंगा। कुछ समय बाद आप अयोध्या के राजा श्री दशरथ के रूप में जन्म लेंगे, उसी समय मैं आपका पुत्र बनकर आपकी इच्छा पूरी करूंगा।'

इस प्रकार श्री मनु और शतरूपा को दिए वरदान के कारण भगवान श्री विष्णु को श्री राम अवतार लेना पड़ा।

श्री राम जन्म

श्री शिव शंकर भगवान् माँ भवानी से बोले, 'हे भवानी, त्रेता युग में जब पराये धन और परायी स्त्री पर मन चलाने वाले दुष्ट, चोर और जुआरी बहुत बढ़ गए। लोग माता पिता और गुरुओं की अवहेलना करने लगे, तब पृथ्वी माँ विचलित होकर गौ माता का रूप धर सभी देवी एवं देवताओं एवं श्री ब्रह्मा जी के साथ भगवान् श्री विष्णू की शरण में गयीं। सभी भगवान् श्री विष्णू की स्तुति करने लगे।

जय जय सुरनायक जन सुखदायक प्रनतपाल भगवंता ।
गो द्विज हितकारी जय असुरारी सिधुंसुता प्रिय कंता ।।
पालन सुर धरनी अद्भुत करनी मरम न जानइ कोई ।
जो सहज कृपाला दीनदयाला करउ अनुग्रह सोई ।।
जय जय अबिनासी सब घट बासी ब्यापक परमानंदा ।
अबिगत गोतीतं चरित पुनीतं मायारहित मुकुंदा ।।
जेहि लागि बिरागी अति अनुरागी बिगतमोह मुनिबृंदा ।
निसि बासर ध्यावहिं गुन गन गावहिं जयति सच्चिदानंदा ।।
जेहिं सृष्टि उपाई त्रिबिध बनाई संग सहाय न दूजा ।
सो करउ अघारी चिंत हमारी जानिअ भगति न पूजा ।।
जो भव भय भंजन मुनि मन रंजन गंजन बिपति बरूथा ।
मन बच क्रम बानी छाड़ि सयानी सरन सकल सुर जूथा ।।
सारद श्रुति सेषा रिषय असेषा जा कहुँ कोउ नहि जाना ।
जेहि दीन पिआरे बेद पुकारे द्रवउ सो श्री भगवाना ।।
भव बारिधि मंदर सब बिधि सुंदर गुनमंदिर सुखपुंजा ।
मुनि सिद्ध सकल सुर परम भयातुर नमत नाथ पद कंजा ।।

हे प्रभु, आपकी जय हो, जय हो। हे देवताओंके स्वामी, सेवकों को सुख देनेवाले, शरणागतकी रक्षा करनेवाले भगवान्, हे गौ और

ब्राह्मणों का हित करनेवाले, असुरोंका विनाश करनेवाले, समुद्रकी कन्या श्री लक्ष्मीजी के प्रिय स्वामी, आपकी जय हो।

हे देवता और पृथ्वीका पालन करनेवाले, आपकी लीला अद्‌भुत है। आपकी लीला का भेद कोई नहीं जानता। ऐसे जो स्वभाव से ही कृपालु और दीनदयालु हैं, वे ही हमपर कृपा करें। हे अविनाशी, सबके हृदय में निवास करनेवाले अन्तर्यामी, सर्वव्यापक, परम आनन्दस्वरूप, अज्ञेय, इन्द्रियोंसे परे, पवित्र चरित्र, मायासे रहित मुकुन्द, मोक्षदाता, आपकी जय, जय हो।

इस लोक और परलोक के सब भोगों से विरक्त तथा मोह से सर्वथा छूटे हुए ज्ञानी मुनिवृन्द भी अत्यन्त अनुरागी बनकर जिनका रात-दिन ध्यान करते हैं, और जिनके गुणोंके समूह का गान करते हैं, उन सच्चिदानन्द की जय हो। जिन्होंने बिना किसी दूसरे सहायक के, बिना किसी उपादान के सृष्टि उत्पन्न की, वे पापों का नाश करने वाले भगवान् हमारी सुधि लें।

हे प्रभु हम न भक्ति जानते हैं, न पूजा। संसार के जन्म मृत्यु के भय का नाश करनेवाले, मुनियों के मन को आनन्द देनेवाले और विपत्तियों के समूह को नष्ट करनेवाले हे प्रभु, हम सब देवताओं के समूह मन, वचन और कर्म से चतुराई करने की बान छोड्‌कर आपकी शरण आये हैं।

सरस्वती, वेद, शेषजी और सम्पूर्ण ऋषि, कोई भी जिनको नहीं जानते, जिन्हें दीन प्रिय हैं, ऐसा वेद पुकार कर कहते हैं, वे ही श्री भगवान् हमपर दया करें। हे संसाररूपी समुद्र के मथने के लिये मन्दराचल रूप, सब प्रकार से सुन्दर, गुणों के धाम और सुखों की राशि नाथ, आपके चरण कमलों में मुनि, सिद्ध और सारे देवता भय से अत्यन्त व्याकुल होकर नमस्कार करते हैं।

देवता और पृथ्वी को भयभीत जानकर और उनके स्नेहयुक्त वचन सुनकर, शोक और सन्देहको हरने वाली, गम्भीर आकाशवाणी हुई।

जानि सभय सुरभूमि सुनि बचन समेत सनेह ।
गगनगिरा गंभीर भइ हरनि सोक संदेह ।

जनि डरपहु मुनि सिद्ध सुरेसा। तुम्हहि लागि धरिहउँ नर बेसा ।।
अंसन्ह सहित मनुज अवतारा। लेहउँ दिनकर बंस उदारा ।।
कस्यप अदिति महातप कीन्हा। तिन्ह कहुँ मैं पूरब बर दीन्हा ।।
ते दसरथ कौसल्या रूपा। कोसलपुरीं प्रगट नरभूपा ।।
तिन्ह के गृह अवतरिहउँ जाई। रघुकुल तिलक सो चारिउ भाई।।
नारद बचन सत्य सब करिहउँ। परम सक्ति समेत अवतरिहउँ।।
हरिहउँ सकल भूमि गरुआई। निर्भय होहु देव समुदाई।।

'हे मुनि, सिद्ध और देवताओं के स्वामियों, डरो मत। तुम्हारे लिए मैं मनुष्य का रूप धारण करूँगा, और उदार पवित्र सूर्यवंश में अंशों सहित मनुष्य का अवतार लूँगा। कश्यप और अदिति ने बड़ा भारी तप किया था। मैं पहले ही उनको वर दे चुका हूँ। वे ही दशरथ और कौसल्या के रूप में मनुष्यों के राजा होकर श्री अयोध्यापुरी में प्रकट हुए हैं। उन्हीं के घर जाकर मैं रघुकुल में श्रेष्ठ चार भाइयों के रूप में अवतार लूँगा। श्री नारद के सब वचन मैं सत्य करूँगा और अपनी पराशक्ति के सहित अवतार लूँगा। मैं पृथ्वी का सब भार हर लूँगा। हे देव वृंद, तुम निर्भय हो जाओ।'

आकाश में ब्रह्म भगवान की वाणी को कान से सुनकर देवता तुरंत लौट गए। उनका हृदय शीतल हो गया।

श्री प्रभु के वचनानुसार कालांतर में अवधपुरी में रघुकुल शिरोमणी श्री दशरथ नाम के राजा हुए। उनके कौशल्या आदि चार रानियां

थीं। प्रौढ़ अवस्था तक उनके कोई पुत्र नहीं हुए, इससे उन्हें अत्यंत चिंता हुई। वह अपने गुरु श्री वशिष्ठ ऋषी जी के पास गए और अपनी व्यथा सुनायी।

गुरु श्री वशिष्ठ ऋषी बोले, 'राजन थोड़ा सा धैर्य रखो, तुम्हारे चार पुत्र होंगे।'

श्री वशिष्ठ गुरु जी ने श्री श्रृंगी ऋषी जी को पुत्र कामेष्टी यज्ञ कराने हेतु आमंत्रित किया।

सृंगी रिषहि बसिष्ठ बोलावा। पुत्रकाम सुभ जग्य करावा।।
भगति सहित मुनि आहुति दीन्हें। प्रगटे अगिनि चरू कर लीन्हें।।

जो बसिष्ठ कछु हृदयँ बिचारा। सकल काजु भा सिद्ध तुम्हारा।।
यह हबि बाँटि देहु नृप जाई। जथा जोग जेहि भाग बनाई।।

महर्षि श्री वशिष्ठ ने श्री श्रृंगी ऋषि को बुलवाया और उनसे शुभ पुत्रकामेष्टि यज्ञ कराया। मुनि के भक्ति सहित आहुतियाँ देने पर श्री अग्निदेव हाथ में चरु (हविष्यान्न खीर) लिए प्रकट हुए। श्री अग्निदेव महर्षि श्री श्रंगी से बोले, 'महर्षि श्री वशिष्ठ ने हृदय में जो कुछ विचारा था, तुम्हारा वह सब काम सिद्ध हो गया। हे ऋषिवर, तुम इस प्रसाद को सम्राट श्री दशरथ को दे दो। वह जैसा उचित समझें, अपनी रानियों में विभाजित कर उन्हें दे दें '।

मुझ से लोग अक्सर यह प्रश्न पूछते हैं कि महर्षि श्री वशिष्ठ तो परम तत्व ज्ञाता, भगवान् श्री ब्रह्मा के मानस पुत्र, वेदों के अनगिनत श्लोकों के रचयिता एवं महान विद्वान् थे। उनसे अधिक समर्थ इस 'पुत्र कामेष्ठी यज्ञ' को संचालित करने में और कौन हो सकता था? उन्होंने इस यज्ञ को स्वयं न संचालित कर, महर्षि श्री शृंगी को इस

यज्ञ की आचार्यता के लिए आमंत्रित किया, और उन्हीं के कर कमलों से इस यज्ञ को फलीभूत कराया। ऐसा क्यों?

यह समझना आवश्यक है कि इस प्रकार के यज्ञ तभी फलीभूत होतें हैं जब समस्त परिवार का आशीर्वाद प्राप्त हो। इसी कारण हमारे सनातन धर्म में धर्म कार्य के लिए सभी परिवार के सदस्यों का उपस्थित होना अनिवार्य बताया है। सम्राट श्री दशरथ के सबसे बड़ी एक पुत्री थीं, शांता, जिनका विवाह महर्षि श्री श्रंगी के साथ हुआ था। इस यज्ञ की पूर्ण सफलता के लिए, शांता और महर्षि श्री श्रंगी का इस यज्ञ में उपस्थित होना अत्यंत अनिवार्य था। महर्षि श्री वशिष्ठ जानते थे कि साधारण निमंत्रण देने पर संभवतः महर्षि श्री श्रंगी का आना संभव न हो सके, लेकिन वेद प्रणाली के अनुसार अगर किसी को आचार्य बना कर आमंत्रित किया जाए, तो धर्म कार्य को संचालन करने के लिए मना करना धर्म विरुद्ध है। अतः, उनको अगर यज्ञ आचार्य बनाकर आमंत्रित किया जाएगा, तो वह अवश्य ही मना नहीं कर सकेंगे, और यज्ञ संचालन करेंगे। और हुआ भी ऐसा ही।

माता शांता और महर्षि श्री श्रंगी की कथा कुछ इस प्रकार है।

श्री राम के माता पिता, भाइयों के बारे में तो प्रायः सभी जानते हैं लेकिन बहुत कम लोगों को यह मालूम है कि श्री राम की एक बहन भी थीं जिनका नाम शांता था। वे आयु में चारों भाइयों से काफी बड़ी थीं। उनकी माता कौशल्या थीं। उनका विवाह कालांतर में महर्षि श्री श्रंगी से हुआ था।

रानी वर्षिणी रानी कौशल्या की बहन थीं। उनका विवाह अंगदेश के राजा श्री रोमपद से हुआ था। एक बार अंगदेश के राजा श्री रोमपद और उनकी रानी वर्षिणी अयोध्या आए। उनके कोई संतान

नहीं थी। बातचीत के दौरान राजा श्री दशरथ ने कहा, 'मैं बेटी शांता आपको संतान के रूप में देता हूँ।'

श्री रोमपद और वर्षिणी बहुत खुश हुए। उन्हें शांता के रूप में संतान मिल गई। उन्होंने बहुत स्नेह से उसका पालन-पोषण किया, और माता-पिता के सभी कर्तव्य निभाए।

एक दिन राजा श्री रोमपद अपनी पुत्री से बातें कर रहे थे, तब द्वार पर एक ब्राह्मण आया और उसने राजा से प्रार्थना की कि वर्षा के दिनों में वे खेतों की जुताई में शासन की ओर से उसकी एवं उसके समुदाय की मदद प्रदान करें। राजा को यह सुनाई नहीं दिया, और वे पुत्री के साथ बातचीत करते रहे।

द्वार पर आए नागरिक की याचना न सुनने से ब्राह्मण को दुख हुआ और वे राजा श्री रोमपद का राज्य छोड़कर चले गए। वे श्री इंद्र के भक्त थे। अपने भक्त की ऐसी अनदेखी पर श्री इंद्र देव राजा श्री रोमपद पर क्रुद्ध हुए, और उन्होंने पर्याप्त वर्षा नहीं की। इससे खेतों में खड़ी फसल मुझने लगी।

इस संकट की घड़ी में राजा श्री रोमपद महर्षि श्री श्रंगी के पास गए और उनसे उपाय पूछा। महर्षि श्री श्रंगी ने बताया कि वे श्री इंद्र देव को प्रसन्न करने के लिए यज्ञ करें। महर्षि श्री श्रंगी ने यज्ञ किया। पर्याप्त बारिश हुई और और खेत-खलिहान पानी से भर गए। इसके बाद राजा श्री रोमपद ने प्रसन्न होकर अपनी पुत्री शांता का विवाह महर्षि श्री श्रंगी से कर दिया, और वे सुखपूर्वक रहने लगे।

पौराणिक कथाओं के अनुसार महर्षि श्री श्रंगी, महर्षि श्री विभण्डक तथा अप्सरा उर्वशी के पुत्र थे। महर्षि श्री विभण्डक ने

इतना कठोर तप किया कि देवतागण भयभीत हो गये, और उनके तप को भंग करने के लिए अप्सरा उर्वशी को भेजा। अप्सरा उर्वशी ने उन्हें मोहित कर उनके साथ संसर्ग किया, जिसके फलस्वरूप महर्षि श्री श्रंगी की उत्पत्ति हुयी। महर्षि श्री श्रंगी के माथे पर एक सींग (शृंग) था, अतः उनका यह नाम पड़ा।

महर्षि श्री वसिष्ठ के निमंत्रण पर तब महर्षि श्री श्रृंगी अपनी पत्नी शांता के साथ अयोध्या पहुंचे और उन्होंने पुत्र कामेष्ठि यज्ञ का सफलता पूर्वक संचालन किया। यज्ञ समापन पर श्री अग्निदेव खीर का प्रसाद लेकर उपस्थित हुए, और उन्होंने महर्षि श्री श्रंगी से कहा, 'हे ऋषि शिरोमणि, जैसा महर्षि श्री वशिष्ठ ने विचार किया था, वह पूर्ण हो गया। इस प्रसाद को आप महाराज श्री दशरथ को दे दें, और उनसे उनकी इक्षानुसार इसे चार भागों में विभाजित कर अपनी तीनों पत्नियों, कौशल्या, कैकई और सुमित्रा को देने को कहें। वह शीघ्र ही चार पुत्रो के पिता बनेंगे।' यह कहकर श्री अग्नि देव अंतर्ध्यान हो गए। तब महर्षि श्री श्रंगी ने वह खीर महाराज श्री दशरथ को सौंपी।

महाराज श्री दशरथ ने तब उस खीर के अपनी इक्षानुसार चार भाग किये, एवं अपनी पत्नियों को दिए। इस प्रकार सब रानियां गर्भवती हुईं।

श्री गुरुदेव कहते हैं कि यहाँ प्रभु को पाने के लिए खीर के प्रसाद की अत्यंत महत्वा है। खीर मुख्यतः तीन पदार्थों से बनती है - दुग्ध, चावल एवं मीठा। दुग्ध, गौ माँ द्वारा दिया हुआ प्रेम और श्रद्धा का प्रतीक है। चावल माँ भूमि में कड़ी मेहनत और धैर्य के बाद प्राप्त होता है, अतः सुकर्म एवं धैर्य का प्रतीक है। मीठा भक्ति का प्रतीक है। जब प्रेम, श्रद्धा, सुकर्म, धैर्य एवं भक्ति का मिलन होता है, तब भगवान् प्रगट हो जाते हैं।

गोस्वामी तुलसी दास जी कहते हैं कि समय पर महाराज श्री दशरथ चार पुत्रों के पिता बने।

नौमी तिथि मधु मास पुनीता, सुकल पच्छ अभिजित हरिप्रीता ।
मध्यदिवस अति सीत न घाम।, पावन काल लोक बिश्रामा ।

'पवित्र चैत्र का महीना था, नवमी तिथि थी। शुक्ल पक्ष और भगवान का प्रिय अभिजित् मुहूर्त था। दोपहर का समय था। न बहुत सर्दी थी, न धूप (गरमी) थी। वह पवित्र समय सब लोकों को शांति देने वाला था। '

सीतल मंद सुरभि बह बाऊ, हरषित सुर संतन मन चाऊ ।
बन कुसुम गिरिगन मनिआरा, स्रवहिं सकल सरिताऽमृतधारा ।

'शीतल, मंद और सुगंधित पवन बह रही था। देवता हर्षित थे और संतों के मन में बड़ा चाव था। वन फूले हुए थे। पर्वतों के समूह मणियों से जगमगा रहे थे। सारी नदियाँ अमृत की धारा बहा रही थी। '

सो अवसर बिरंचि जब जाना, चले सकल सुर साजि बिमाना ।
गगन बिमल संकुल सुर जूथा, गावहिं गुन गंधर्ब बरूथा ।

'जब ब्रह्माजी ने भगवान के प्रकट होने का अवसर जाना तब उनके समेत सारे देवता विमान सजाकर चले। निर्मल आकाश देवताओं के समूहों से भर गया। गंधर्वों के दल गुणों का गान करने लगे।'

बरषहिं सुमन सुअंजुलि साजी, गहगहि गगन दुं दुभी बाजी ।
अस्तुति करहिं नाग मुनि देवा, बहुबिध लावहिं निज निज सेवा ।

'गंधर्वों के दल सुंदर अंजलियों में सजाकर पुष्प बरसाने लगे। आकाश में घमाघम नगाड़े बजने लगे। नाग, मुनि और देवता स्तुति करने लगे और बहुत प्रकार से अपनी-अपनी सेवा भेंट करने लगे।'

भए प्रगट कृपाला दीनदयाला कौसल्या हितकारी।
हरषित महतारी मुनि मन हारी अद्भुत रूप बिचारी।
लोचन अभिरामा तनु घनस्यामा निज आयुध भुजचारी।
भूषन बनमाला नयन बिसाला सोभासिंधु खरारी।

'दीनों पर दया करने वाले, कौसल्याजी के हितकारी कृपालु प्रभु प्रकट हुए। मुनियों के मन को हरने वाले उनके अद्भुत रूप का विचार करके माता हर्ष से भर गई। नेत्रों को आनंद देने वाला मेघ के समान श्याम शरीर था। चारों भुजाओं में आयुध धारण किए हुए थे। दिव्य आभूषण और वनमाला पहने थे। बड़े-बड़े नेत्र थे। इस प्रकार शोभा के समुद्र तथा खर राक्षस को मारने वाले भगवान प्रकट हुए।'

कह दुइ कर जोरी अस्तुति तोरी केहि बिधि करौं अनंता।
माया गुन ग्यानातीत अमाना बेद पुरान भनंता।
करुना सुख सागर सब गुन आगर जेहि गावहिं श्रुति संता।
सो मम हित लागी जन अनुरागी भयउ प्रगट श्रीकंता।

'दोनों हाथ जोड़कर माता कहने लगी, 'हे अनंत, मैं किस प्रकार तुम्हारी स्तुति करूँ। वेद और पुराण तुम को माया, गुण और ज्ञान से परे और परिमाण रहित बतलाते हैं। श्रुतियाँ और संतजन दया और सुख का समुद्र, सब गुणों का धाम कहकर जिनका गान करते हैं, वही भक्तों पर प्रेम करने वाले लक्ष्मीपति भगवान मेरे कल्याण के लिए प्रकट हुए हैं।'

ब्रह्मांड निकाया निर्मित माया रोम रोम प्रति बेद कहै ।
मम उर सो बासी यह उपहासी सुनत धीर मति थिर न रहै ।
उपजा ग्याना प्रभु मुसुकाना चरित बहुत बिधि कीन्ह चहै ।
कहि कथा सुहाई मातु बुझाई जेहि प्रकार सुत प्रेम लहै ।

'वेद कहते हैं कि तुम्हारे प्रत्येक रोम में माया के रचे हुए अनेकों ब्रह्माण्डों के समूह भरे हैं। तुम मेरे गर्भ में रहे, इस हँसी की बात के सुनने पर धीर, विवेकी पुरुषों की बुद्धि भी स्थिर नहीं रहती, विचलित हो जाती है।'जब माता को ज्ञान उत्पन्न हुआ, तब प्रभु मुस्कुराए। वे बहुत प्रकार के चरित्र करना चाहते हैं। उन्होंने पूर्व जन्म की सुंदर कथा कहकर माता को समझाया, जिससे उन्हें पुत्र का वात्सल्य प्रेम प्राप्त हो, भगवान के प्रति पुत्र भाव हो जाए।'

माता पुनि बोली सो मति डोली तजहु तात यह रूपा ।
कीजै सिसुलीला अति प्रियसीला यह सुख परम अनूपा ।
सुनि बचन सुजाना रोदन ठाना होइ बालक सुरभूपा ।
यह चरित जे गावहिं हरिपद पावहिं ते न परहिं भवकूपा ।

'माता की वह बुद्धि बदल गई, तब वह फिर बोली, ' हे तात, यह रूप छोड़कर अत्यन्त प्रिय बाललीला करो, मेरे लिए यह सुख परम अनुपम होगा। माता का यह वचन सुनकर देवताओं के स्वामी सुजान भगवान ने बालक रूप होकर रोना शुरू कर दिया।'

तुलसीदास जी कहते हैं, 'जो इस चरित्र का गान करते हैं, वे श्री हरि का पद पाते हैं और फिर संसार रूपी कूप में नहीं गिरते।'

इस प्रकार भगवान् श्री राम और उनके तीन भाईओं का जन्म हुआ। उनके अन्य तीन भाईओं के नाम श्री भरत, श्री लक्ष्मण और श्री शत्रुघ्न रखे गए।

श्री राम आरती

हे राजा राम तेरी आरती उतारूँ ।
आरती उतारूँ प्यारे तुमको मनाऊ ।।
अवध विहारी तेरी आरती उतारूँ ।
हे राजा राम तेरी आरती उतारूँ ।।

कनक सिंहासन विराजत जोड़ी ।
दशरथ नंदन जनक किशोरी ।।
युगुल छबि को सदा निहारूँ ।
हे राजा राम तेरी आरती उतारूँ ।।

बाम भाग शोभति जग जननी ।
चरण बिराजत है सुत अंजनी ।।
उन चरणों को सदा पखारू ।
हे राजा राम तेरी आरती उतारूँ ।।

आरती हनुमंत के मन भाये ।
राम कथा नित शिव जी गाये ।।
राम कथा हृदय में उतारू ।
हे राजा राम तेरी आरती उतारूँ ।।

चरणों से निकली गंगा प्यारी ।
वंदन करती दुनिया सारी ।।
उन चरणों में शीश नवाऊँ ।
हे राजा राम तेरी आरती उतारूँ ।।

कथाकार

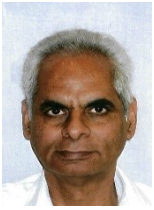

डॉ यतेंद्र शर्मा - सन १९५३ में एक हिन्दू सनातन परिवार में जन्मे डॉ यतेंद्र शर्मा की रूचि बचपन से ही सनातन धर्म ग्रंथों का पठन पाठन एवं श्रवण में रही है। संस्कृत की प्रारम्भिक शिक्षा उन्होंने अपने पितामह श्री भगवान् दास जी एवं नरवर संस्कृत महाविद्यालय के प्राचार्य श्री सालिग्राम अग्निहोत्री जी से प्राप्त की और पांच वर्ष की आयु में महर्षि पाणिनि रचित संस्कृत व्याकरण कौमुदी को कंठस्थ किया। उन्होंने तकनीकी विश्वविद्यालय ग्राज़ ऑस्ट्रिया से रसायन तकनीकी में पी.अच्.डी की उपाधी विशिष्टता के साथ प्राप्त की। सन १९८९ से डॉ यतेंद्र शर्मा अपने परिवार सहित पर्थ ऑस्ट्रेलिया में निवास कर रहें हैं, तथा पश्चिमी ऑस्ट्रेलिया के खनन उद्योग में कार्य रत हैं।

सन २०१६ में उन्होंने अपने कुछ धार्मिक मित्रों के साथ एक धार्मिक संस्था 'श्री राम कथा संस्थान पर्थ' की स्थापना की। यह संस्था श्री भगवान् स्वामी रामानंद जी महाराज (१४वीं- १५वीं शताब्दी) की शिक्षाओं से प्रभावित है तथा समय समय पर गोस्वामी तुलसी दास जी रचित श्री राम चरित मानस एवं अन्य धार्मिक कथाओं का प्रवचन, सनातन धर्म के महान संतों, ऋषियों, माताओं का चरित्र वर्णन एवं धार्मिक कथाओं के संकलन में अपना योगदान करने का प्रयास करती है।